2023

cprhe नीति सार

उच्च शिक्षा का शासन और प्रबंधन

नीति सार 6

भारत में सरकार और विश्वविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के अंतर्संबंध

नीति सार 7

भारत में विश्वविद्यालय-महाविद्यालय शासन संबंध

उच्च शिक्षा नीति अनुसंधान केन्द्र

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान

17-बी, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-11016 (भारत)

वेबसाइटः www.niepa.ac.in

© राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान, 2023
(मानित विश्वविद्यालय)

हिन्दी संस्करण : जुलाई 2024 (0.20 H) (डिजिटल मुद्रित)

© सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी भाग, नीपा की लिखित अनुमति के बिना पुनः मुद्रित नहीं किया जा सकता है और न ही पुनः प्राप्ति प्रणाली या किसी भी रूप में या किसी भी तरह के साधन जैसे इलेक्ट्रॉनिक्स, मैग्नेटिक टेप, यांत्रिक साधनों, फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग द्वारा या अन्यथा संग्रहित नहीं किया जा सकता है।

नीति सार, उच्च शिक्षा नीति अनुसंधान केंद्र (सीपीआरएचई), नीपा, नई दिल्ली द्वारा किए गए अनुभवाश्रित अध्ययनों के अंतर्गत प्रकाश में आए मुद्दों पर आधारित है। यह नीति सार नीति निर्माताओं और उच्च शिक्षा प्रबंधकों को संबोधित है।

अस्वीकरण : प्रकाशन में व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार हैं और आवश्यक नहीं कि वे राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली को प्रतिबिंबित करते हों।

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा)
17-बी, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110016 के कुलसचिव द्वारा प्रकाशित और नीपा द्वारा डिजाइन एवं मैसर्स शिव शक्ति इंटरप्राइजेज, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

cprhe
Centre for Policy Research in Higher Education
नीति सार 6
2023

भारत में सरकार और विश्वविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के अंतर्संबंध

परिचय

वर्तमान भारत में उच्च शिक्षा सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) 27.3 (2020-21 में) की दर के साथ सार्वजनीकरण के दौर से गुजर रहा है। विस्तार और विविधता की पृष्ठभूमि में भारत में विश्वविद्यालयों का प्रशासन और प्रबंधन जटिल होता जा रहा है। उच्च शिक्षा प्रणाली का सार्वजनीकरण, विश्वविद्यालयों की एकात्मक संरचना से बढ़कर एक लचीली व्यवस्था तक विस्तार के कारण हुआ है, जो देश के विभिन्न समूहों और क्षेत्रों की अलग-अलग मांगों को समायोजित कर सकता है। पिछले कुछ वर्षो में सरकार और विश्वविद्यालयों के बीच नए संबंध विकसित हुए हैं। इस नए परिदृश्य में सरकार की भूमिका बदलकर सीधे नियंत्रित करने की बजाय 'दूर से प्रक्रिया को चलाने' में बदल गई है। इसके अलावा, अब सारा ध्यान कार्य निष्पादन के स्थान पर प्रदर्शन और परिणाम-आधारित उपायों पर केंद्रित हो गया है। 'प्रबंधनवाद' के इस नए रूप का उच्च शिक्षा प्रणाली में स्वायत्तता और जवाबदेही पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

विश्वविद्यालयों को हमेशा 'कोलेजीयल' संगठन माना जाता रहा है जिसे विद्वानों के एक समुदाय द्वारा शासित और प्रबंधित किया जाता है। पिछले कई दशकों में प्रबंधकीयवाद के नए प्रकारों ने विश्वविद्यालय के मूल विचारों को बदल दिया है। वैश्वीकरण की लहर के साथ-साथ कुछ लोग शासी मंडल और आंतरिक एवं बाहरी हितधारकों दोनों के प्रति अधिक जवाबदेही के कारण इस बदलाव का बचाव करते हैं। हालाँकि, इसके साथ-साथ यह तर्क भी दिया जाता है कि इन बदलावों से प्राध्यापक पदों और महाविद्यालय की शक्ति में सामान्यतः गिरावट आई है। परिणामस्वरूप, सरकार और विश्वविद्यालयों के बीच एक नया सम्बन्ध विकसित हो रहा है।

भारत में विभिन्न प्रकार के उच्च शिक्षा संस्थान हैं। इनमें केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा स्थापित बहु-संकाय विश्वविद्यालय शामिल हैं, जिनमें से कुछ की संरचना एकात्मक है और अन्य संबंधित महाविद्यालय हैं। इसके अतिरिक्त केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा स्थापित मुक्त विश्वविद्यालय हैं; व्यावसायिक एवं तकनीकी संस्थान हैं; ऐसे ही मानित विश्वविद्यालय भी हैं जिन्हें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) द्वारा चार्टर्ड किया गया है लेकिन केंद्रीय या राज्य अधिनियमों द्वारा स्थापित नहीं किया गया है; निजी विश्वविद्यालय और संसद के विभिन्न अधिनियमों द्वारा स्थापित राष्ट्रीय महत्व के संस्थान हैं जैसे कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान (एनआईटी), भारतीय प्रबंधन संस्थान (आईआईएम), और भारतीय विज्ञान, शिक्षा और अनुसंधान संस्थान (आईआईएसईआर), जो पेशेवर स्नातक, स्नातकोत्तर और अनुसंधान कार्यक्रमों को चलाते हैं।

अक्सर इस बात का संकेत किया जाता है कि भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली अति-नियंत्रित और कम-शासित है। इसलिए, सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी), 2020 के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। उच्च शिक्षा प्रणाली की कायापलट का सार, बड़े बहु-विषयक विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के संरचनात्मक पुनर्गठन में निहित है। नई शिक्षा नीति गहन-अनुसंधान विश्वविद्यालयों, गहन-शिक्षण विश्वविद्यालयों और स्वायत्त डिग्री प्रदान करने वाले महाविद्यालयों की स्थापना का प्रस्ताव करती है।

यह नीति सार भारत में सरकार और विश्वविद्यालयों के बीच बदलते संबंधों की जांच करता है। यह उन हस्तक्षेपकारी रणनीतियों की रूपरेखा भी तैयार करता है जो राज्य की सहवर्ती भूमिका के साथ-साथ उनके शासन और कामकाज से संबंधित जटिल चुनौतियों का सामना करने वाले संस्थानों के लिए अधिक स्वायत्तता की सुविधा प्रदान करेगा। इसके साथ ही, यह विश्वविद्यालयों के सामने आ रही आंतरिक शासन की चुनौतियों और उनके दिन-प्रतिदिन के प्रबंधन में सुधार एवं उनके सुचारू कामकाज के लिए बढ़ती आवश्यक जवाबदेहियों को सुनिश्चित करने के लिए अपनाई जा रही हस्तक्षेपकारी रणनीतियों की रूपरेखा भी तैयार करता है।

सरकार-विश्वविद्यालय संबंध

भारत में उच्च शिक्षा का प्रशासन राज्य के नियंत्रण से हटकर राज्य के पर्यवेक्षण पर आधारित मॉडल में बदल गया है। आजादी के बाद से भारत में उच्च शिक्षण संस्थानों को अधिक स्वायत्तता दी जा रही है, जो विभिन्न समितियों और आयोगों की रिपोर्टों में भी सामने आया है। इस तरह की पहलकदमियां वास्तव में, नए सार्वजनिक प्रबंधन को बढ़ावा देती हैं, जो सीधे नियंत्रण की बजाय दूर से संचालित करने पर केंद्रित प्रशासनिक प्रणाली का प्रतीक हैं।

उच्च शिक्षा में इस गति और बड़े पैमाने पर विस्तार ने राज्य पर राजकोषीय बोझ बढ़ा दिया है, जो अक्सर उच्च शिक्षण संस्थानों के वित्त पोषण में कमी के रूप में सामने आ रहा है। सार्वजनिक विश्वविद्यालयों के ''निगमीकरण'' की दिशा में उठाए गए कदम भी स्पष्ट रूप से सामने हैं, जिसके तहत विश्वविद्यालयों को दृष्टिकोण में अधिक प्रबंधकीय और प्रकृति में उद्यमशील बनने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। इस संदर्भ में, मूल मुद्दा यह है कि क्या राज्य सार्वजनिक उच्च शिक्षण संस्थानों को उनके आवश्यक विस्तार और उन्नत अनुसंधानात्मक गतिविधियों की लगातार बढ़ती लागत के मद्देनजर वित्तपोषित करने में सक्षम होगा। सरकार और उच्च शिक्षण संस्थानों के संबंध में महत्वपूर्ण बात यह है कि राज्यीय विश्वविद्यालयों के मामले में शिक्षा मंत्रालय, कॉलेजिएट शिक्षा निदेशालय और उच्च शिक्षा की राज्य परिषदों के साथ संस्थान किस प्रकार संवाद स्थापित करते हैं। केंद्रीय विश्वविद्यालयों के संदर्भ में शिक्षा मंत्रालय और यूजीसी के साथ उनके संबंध मायने रखते हैं। केंद्रीय विश्वविद्यालयों की तुलना में राज्य विश्वविद्यालयों की वित्तीय स्थिति में अंतर है, केंद्रीय विश्वविद्यालयों के पास धन की कमी का सामना कर रहे राज्य विश्वविद्यालयों की तुलना में अधिक एवं पर्याप्त निधि है। इस प्रकार, स्वायत्तता की धारणा पर अधिकांश चर्चाएं सार्वजनिक संस्थानों और सरकार के बीच संबंधों के संदर्भ में होती हैं। हालाँकि, यह संदर्भ निजी संस्थानों के प्रबंधकों/मालिकों और सरकार के बीच संबंधों पर समान रूप से लागू हो सकता है, विशेष रूप से सरकार द्वारा लगाए गए नियमों के संदर्भ में।

विशेष रूप से भारत में जहां राज्य-वित्तपोषित और निजी-वित्तपोषित मॉडल एक साथ मौजूद हैं, उच्च शिक्षा के वित्त पोषण मॉडल को देखते हुए शासन के मुद्दे पर निर्णय लेने को स्वायत्तता के प्रश्न से अलग करना वास्तव में कठिन है।

विश्वविद्यालय मूल रूप से उन क्षेत्रों के बारे में जागरूक हैं जहां वे मानते हैं कि स्वायत्तता का प्रयोग संस्थान की मूल आत्मा पर सबसे अधिक प्रभाव डालेगा, जैसे छात्रों और व्याख्याताओं का चयन, विश्वविद्यालय में पेश किए जाने वाले पाठ्यक्रमों की रूपरेखा, पाठ्यक्रम, और अनुसंधान के प्रबंधन का मूल्यांकन आदि।

भारत में, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) जैसे संगठनों ने विश्वविद्यालयों के प्रदर्शन के निगरानी की शुरुआत की है, जबकि राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद की स्थापना के साथ बाह्य एवं आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन तंत्र का उपयोग आम बात हो गयी है। इन मध्यवर्ती (बफर) निकायों ने सरकार और संस्थानों के बीच संबंधों को नए सिरे से परिभाषित किया है। वे नीतिगत सहायता भी प्रदान कर रहे हैं, गुणवत्ता नियंत्रण सुनिश्चित कर रहे हैं, निजी संस्थानों के विकास को विनियमित कर रहे हैं और बेहतर प्रदर्शन को बढ़ावा देने के लिए कई उत्तरदायी उपाय भी लागू कर रहे हैं।

हालाँकि, स्वायत्तता की अवधारणा को भारत में पूर्ण स्वतंत्रता के रूप में गलत समझा जाता है, जबकि वास्तव में, स्वायत्तता के साथ जवाबदेही भी अधिक होनी चाहिए, अन्यथा यह उस उद्देश्य को ही विफल कर देगी जिसके लिए इसे लागू किया गया था। इसके अलावा, सार्वजनिक उच्च शिक्षण संस्थानों को गहन वित्त पोषण की आवश्यकता है। स्वायत्तता और संस्थानों को अपने संसाधन स्वयं जुटाने के लिए कहने का अर्थ यह नहीं है कि सरकार संस्थानों से सरकारी वित्त पोषण वापस ले लें। उच्च शिक्षण संस्थानों में अधिक स्वायत्तता संस्थानों को लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को अपनाने हेतु प्रेरित करने के लिए होनी चाहिए, साथ ही समिति मूलक प्रणालियों की शुरुआत करनी चाहिए और एक ऐसी प्रक्रिया को बढ़ावा देना चाहिए जिसके तहत शैक्षणिक संस्थानों में नियुक्ति के बजाय विभाग के प्रमुखों और डीन का चुनाव किया जाए। इस प्रकार, स्वायत्तता संस्थागत प्रबंधन शैली को अधिक पारदर्शी, जवाबदेह, भागीदारीपूर्ण और समावेशी बनाने में मदद करेगी। इनके लिए वित्तीय प्रबंधन और बजटीय पहलों में बदलाव की भी आवश्यकता होगी।

जवाबदेह उपायों को लागू करने हेतु नियमों के लिए सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक माना जा सकता है। उच्च शिक्षण संस्थानों के प्रशासन में इन बाजार सिद्धांतों का आगमन राज्य की भूमिका को कम करने के बजाय एक नई परिभाषा को संभव कर रहा है। इस भूमिका में अब शैक्षणिक संस्थानों द्वारा निष्पादित उच्च शिक्षण संस्थानों के वित्तपोषण, प्रबंधन और नियंत्रण की पारंपरिक भूमिकाओं के अलावा प्रणाली के संचालन और विनियमन के लिए एक ढांचे का विकास भी शामिल है।

देश के कई राज्यों में स्थापित उच्च शिक्षा परिषदों के लिए शैक्षिक मानकों को बनाए रखने हेतु नियमों के कार्यान्वयन के साथ-साथ राज्य स्तर पर विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के सभी विकासात्मक कार्यों

के लिए यूजीसी के साथ प्रभावी समन्वय करना बहुत महत्वपूर्ण है। राज्य उच्च शिक्षा परिषदों (एसएचईसी) को भी शीर्ष राज्य-स्तरीय संस्थानों के रूप में उभरना चाहिए, जो न केवल योजना बनाने में बल्कि राज्य में उच्च शैक्षणिक संस्थानों को अकादमिक नेतृत्व प्रदान करने में भी संबंधित राज्य सरकारों को सहायता प्रदान करें। एसएचईसी को राज्यों में गुणवत्ता आश्वासन और मान्यता को बढ़ावा देना चाहिए, साथ ही राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद (नैक) और इसके क्षेत्रीय मान्यता केंद्रों के साथ भी प्रभावी संबंधों को बढ़ावा देना चाहिए।

देश में उच्च शिक्षा प्रणाली में तेजी से हो रहे विस्तार के इस चरण के दौरान शैक्षिक संस्थानों और सरकार दोनों द्वारा विचार किए जा रहे प्रमुख मुद्दों में से एक है कार्यात्मक प्रणाली को बनाए रखने में सक्षम होने के साथ-साथ विश्वविद्यालयों के विकास पथ का प्रबंधन और शासन का आकलन करना। नई शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य भारत में मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालयों की अधिक स्थापना के लिए एक चालक के रूप में सुशासन के साथ-साथ स्वायत्तता को जोड़ना है। यह उद्देश्य इस तर्क से उपजा है कि ब्लॉक अनुदान की व्यापकता, रणनीतिक योजनाओं का कार्यान्वयन, अकादमिक स्वतंत्रता को बढ़ावा देना और स्वतंत्र शासी निकायों का अस्तित्व एक संस्थागत स्वायत्तता के संकेत हैं। यदि वे अपेक्षाओं पर खरे उतरें तो शैक्षणिक संस्थानों को अधिक स्वायत्तता प्रदान की जा सकती है। परिवर्तन लाने के उद्देश्य से सरकार के नए दर्शन ने प्रतिस्पर्धा का द्वार खोल दिया है। विश्वविद्यालयों से अब अधिक प्रतिस्पर्धी प्रबंधकीय व्यवहार प्रदर्शित करने की उम्मीद की जाती है।

आगत-आधारित मॉडल से हटकर अब अधिक निर्गत और प्रदर्शन-आधारित मॉडल की ओर भी बदलाव हुआ है। उच्च शिक्षा का बड़े पैमाने पर प्रसार गैर-राज्य वित्त पोषण के कारण हुआ है और इसके साथ सार्वजनिक संस्थानों में लागत वसूली के उपाय और निजी संस्थानों को संचालन की अनुमति जैसे बाजार सुधार भी शामिल हैं।

विश्वविद्यालयों के अंतर्संबंध

केवल स्वायत्तता प्रदान करना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि यह भी विश्लेषण करना जरूरी है कि ऐसी स्वायत्तता को लागू कैसे किया जाना चाहिए। जहां तक 'विश्वविद्यालय के आतंरिक' संबंधों का संदर्भ है, यह जांच की जा रही है कि आंतरिक शासन संरचनाओं की प्रकृति कैसी है, अर्थात केंद्रीकरण और विकेंद्रीकरण का स्तर। इस प्रकार, यह निर्धारित करना महत्वपूर्ण है कि क्या निर्णय लेने की प्रक्रिया केंद्रीकृत है या सहभागी है; यानी, विश्वविद्यालयों को दी गई स्वायत्तता शिक्षकों को दी जा रही है या स्वायत्तता अत्यधिक केंद्रीकृत है और कुलपति के कार्यालय तक ही सीमित है।

स्वायत्तता देने के साथ जवाबदेही बढ़ाने के प्रयास भी शामिल हैं। जवाबदेही उपायों की प्रभावशीलता का आकलन करने हेतु विभिन्न मापदंडों में प्रदर्शन मूल्यांकन, प्रदर्शन-आधारित अनुबंध, प्रदर्शन-आधारित वित्त पोषण, प्रतिस्पर्धी वित्त पोषण, बाहरी गुणवत्ता आश्वासन एजेंसियों की कार्यप्रणाली और आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन प्रक्रियाएं शामिल हैं। जवाबदेही की अवधारणा में आगत-आधारित से अधिक निर्गत और परिणाम-आधारित उपायों की ओर बढ़ना है। विभिन्न शासी निकायों की संरचना की जांच उनके आंतरिक और बाहरी सदस्यों की संख्या को देखते हुए भी करने की आवश्यकता है, और यह भी जानना आवश्यक है कि क्या बाहरी सदस्य; सरकार, शिक्षाविद या उद्योग से हैं।

भारत के सरकारी विश्वविद्यालयों की शासकीय संरचना के तहत एक शासक मंडल/शासी मंडल होता है, जिसकी अध्यक्षता कुलाधिपति करते हैं, जो राज्य विश्वविद्यालयों के मामले में राज्यपाल हो सकता है, या केंद्रीय विश्वविद्यालयों में अन्यों के अलावा सरकार द्वारा नामित एक प्रतिष्ठित शिक्षाविद्, एक सिंडिकेट, एक सीनेट, एक अकादमिक परिषद, एक वित्त समिति या एक अध्ययन बोर्ड होता है। शासी मंडल व्यापक नीतिगत मार्गदर्शन प्रदान करता है, जबकि सिंडिकेट संस्था से संबंधित प्रशासनिक और वित्तीय मामलों पर निर्णय लेता है।

सीनेट या अकादमिक परिषद किसी विश्वविद्यालय में अकादमिक निर्णय लेने वाली संस्था है। सिंडिकेट और सीनेट की बैठकों की अध्यक्षता कुलपति द्वारा की जाती है। कई बार तो मंत्री ही विश्वविद्यालय परिषद या शासी निकाय के अध्यक्ष होते हैं। यह प्रवृत्ति बदल रही है जिससे अब एक प्रतिष्ठित शिक्षाविद् को विश्वविद्यालय के कुलाधिपति के रूप में चुना जा रहा है।

उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय महत्व के कई संस्थानों और केंद्रीय विश्वविद्यालयों को अब काफी स्वायत्तता प्राप्त है, जो आमतौर पर इन संस्थानों के शासी निकायों से आती है। आईआईटी, आईआईएम, केंद्रीय विश्वविद्यालयों, आईआईएसईआर और एनआईटी के शासी मंडल में बड़ी संख्या में शिक्षाविद और केवल सीमित संख्या (एक या दो) में सरकारी अधिकारी शामिल हैं।

इनमें से कई संस्थानों का नेतृत्व प्रख्यात शिक्षाविदों के पास है। इन संस्थानों में मंडलों को शैक्षणिक कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने, अनुसंधान प्राथमिकताएं तय करने और अन्य कार्यों के अलावा स्टाफिंग मुद्दों पर निर्णय लेने की स्वायत्तता है। दूसरे शब्दों में, हालाँकि इन संस्थानों को सरकार द्वारा वित्त पोषित किया जाता है, फिर भी इन्हें सरकार द्वारा न्यूनतम हस्तक्षेप और नियंत्रण का सामना करना पड़ता है और वास्तव में, इन्हें पर्याप्त स्वायत्तता प्राप्त होती है।

हालाँकि, शासी मंडल वाले कुछ अन्य केंद्रीय वित्त पोषित संस्थानों में सदस्यों के रूप में बड़ी संख्या में सरकारी अधिकारी हैं। यह स्थिति राज्य-वित्त पोषित संस्थानों में समान है, जहां विश्वविद्यालय प्रशासन के सभी पहलुओं में राज्य द्वारा हस्तक्षेप कई संस्थानों में अत्यधिक दिखाई देता है, संस्थागत स्तर पर स्वायत्तता की अवधारणा और कई स्थितियों में शासी निकायों की प्रकृति और महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय लेने का उनका अधिकार महत्वपूर्ण तत्व हैं। कुछ मामलों में, बोर्ड के सदस्यों की एक बड़ी संख्या अकादमिक बिरादरी की तुलना में मंत्रालयों के अधिक करीब होती है। ऐसे बोर्ड संभवतः उन बोर्डों की तुलना में कम स्वायत्तता का प्रयोग कर सकते हैं, जिनके अधिकांश सदस्य शिक्षा से जुड़े हैं।

राज्य और केंद्रीय विश्वविद्यालयों की शासन संरचनाओं के बीच काफी भिन्नता है। इसके अलावा, राज्य विश्वविद्यालय नियंत्रण की दो परतों के अधीन हैं, जिनमें केंद्र सरकार और राज्य-स्तरीय एजेंसियां शामिल हैं।

भारतीय विश्वविद्यालयों में जवाबदेही बढ़ाने के उपायों के उदाहरणों में बाहरी गुणवत्ता आश्वासन एजेंसियां, आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन तंत्र और उच्च शिक्षा संस्थानों की रैंकिंग शामिल हैं। श्रेणीबद्ध स्वायत्तता और वित्त पोषण तंत्र जैसे नए सुधारों का आगमन भी उच्च शिक्षण संस्थानों के लिए चुनौतियां पैदा करता है।

अधिक स्वायत्तता देने, जवाबदेही के उपाय करने, सत्ता के विकेंद्रीकरण और संस्थागत निर्णय लेने की प्रक्रिया में संकाय और छात्रों की बढ़ती भागीदारी के पक्ष में एक बढ़ती हुई आम सहमति बनती दिख रही है। हालाँकि, यह पाया गया है कि कई बार जब सरकार द्वारा उच्च स्वायत्तता प्रदान की जाती है, तब भी संस्थागत स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया तेजी से केंद्रीकृत होती है। इस प्रकार, आदेश और नियंत्रण का एक पारिस्थितिकी तंत्र कुलपतियों के कार्यालयों से लेकर शिक्षकों और छात्रों तक व्याप्त होता दिख रहा है।

हस्तक्षेप के क्षेत्र

- विश्वविद्यालयों को स्वतंत्र शासी मंडल के साथ स्वशासन की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए जिसमें बड़ी संख्या में बाहरी सदस्य शामिल हों।
- मध्यवर्ती (बफर) संगठनों को सरकार के बढ़े हुए हाथ के रूप में कार्य करने के बजाय पूर्ण रूप से स्वतंत्र बनाने की आवश्यकता है। एसएचईसी को न केवल योजना बनाने में बल्कि विश्वविद्यालयों को शैक्षणिक नेतृत्व प्रदान करने में भी राज्य सरकार का समर्थन करने के लिए शीर्ष राज्य स्तरीय संस्थानों के रूप में उभरना चाहिए।
- विश्वविद्यालय नेतृत्वकर्ताओं के चयन और चुनाव में अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए।
- स्वायत्तता की अवधारणा के कार्यान्वयन के लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया में छात्रों, शिक्षकों और प्रबंधन की भागीदारी जरूरी है।
- शासन में सुधार की आवश्यकता है और ''प्रबंधकीयता'' का एक रूप स्पष्टतः अध्ययन के अंतर्गत आने वाले संस्थानों को जकड़ रहा है। अतएव, संस्थागत प्रबंधन शैली अधिक पारदर्शी, जवाबदेह, भागीदारीपूर्ण और समावेशी बननी चाहिए।

निष्कर्ष

जब लिए गए निर्णयों को संस्थागत स्तर पर जवाबदेह उपायों के कार्यान्वयन के साथ संचालन की प्रणाली में परिवर्तित किया जाता है तो शासन प्रभावी हो जाता है और संस्थागत प्रदर्शन में सुधार होता है। विश्वविद्यालय के भीतर निर्णय लेने की विकेन्द्रित प्रणाली के लिए संस्थागत स्वायत्तता एक आवश्यक, लेकिन पर्याप्त शर्त नहीं है। केंद्रीय और राज्य विश्वविद्यालयों में कुलपतियों के स्तर पर सत्ता और निर्णय लेने की अत्यधिक केंद्रीकृत प्रणाली देखी गयी है। इससे पता चलता है कि विश्वविद्यालयों को प्राप्त स्वायत्तता आवश्यक रूप से विश्वविद्यालयों के भीतर विकेंद्रीकृत और सहभागी निर्णय लेने की प्रक्रिया में परिवर्तित नहीं हुई है।

यह नीति सार, उच्च शिक्षा नीति अनुसंधान केंद्र (सीपीआरएचई), राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा), नई दिल्ली, में कार्यरत गरिमा मलिक द्वारा तैयार किया गया है।

नीति सार 6 और 7 मुख्य रूप से बड़े पैमाने पर सीपीआरएचई अनुसंधान अध्ययन पर आधारित हैं, जिसमें छात्रों और संकाय सदस्यों के प्रश्नावली-आधारित सर्वेक्षण, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों, सरकारी उच्च शिक्षा विभागों और राज्य उच्च शिक्षा परिषदों के प्रशासनिक और अकादमिक प्रमुखों के साथ साक्षात्कार शामिल हैं। अध्ययन में चार राज्यों, अर्थात् उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान और महाराष्ट्र में चयनित उच्च शिक्षण संस्थानों में छात्रों और संकाय सदस्यों के साथ समूह चर्चा भी सम्मिलित है।

भारत में विश्वविद्यालय-महाविद्यालय शासन संबंध

परिचय

भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली की कुछ खास विशेषताओं में से एक है संबद्ध महाविद्यालयों की अवधारणा। संबद्ध महाविद्यालयों की तुलना में विश्वविद्यालयों के मुख्य कार्य शासन, प्रवेश, परीक्षा, पाठ्यक्रम-प्रबंधन और शिक्षक भर्ती के साथ विकास से संबंधित हैं। सरकारी महाविद्यालयों को सरकारी सेवा नियमों के तहत प्रशासित किया जाता है जबकि संबद्ध निजी महाविद्यालय अपने संबंधित शासी निकाय द्वारा शासित होते हैं। महाविद्यालयों को उनकी पूरी क्षमता में सक्षम बनाने के लिए कई शासन पद्धतियों की बारीकी से जांच करने की आवश्यकता है। इनमें शामिल हैं; (i) शासन संरचना जिसके परिणामस्वरूप सरकारी महाविद्यालय स्वायत्तता की कमी से ग्रस्त हैं; (ii) शिक्षक भर्ती प्रक्रियाओं के क्रियान्वयन से उत्पन्न होने वाली कमी; (iii) संबद्ध निजी महाविद्यालयों में आंतरिक शासन से संबंधित मुद्दे; और (iv) कमजोर जवाबदेही एवं निगरानी तंत्र का प्रचलन में होना। यह नीति संक्षेप विश्वविद्यालय और महाविद्यालयों के बीच शासन प्रणालियों के संदर्भ में कमजोर संबंधों की जांच करता है।

विश्वविद्यालय-महाविद्यालय संबंध

संबद्धता की प्रणाली, जो आजादी के बाद से भारत में उच्च शिक्षा पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा रही है, अब उच्च शिक्षा के विकास के लिए हानिकारक बन गई है। देश में ऐसे विश्वविद्यालय हैं जहाँ लगभग 1000 संबद्ध महाविद्यालय हैं। ये विश्वविद्यालय विसंगतियों से बड़े पैमाने पर पीड़ित हैं, क्योंकि संबद्ध महाविद्यालयों के औसतन छोटे आकार के बावजूद, छात्रों का अधिक नामांकन इन्हीं महाविद्यालयों में होता है। सरकारी महाविद्यालयों में शिक्षकों की भर्ती एक केंद्रीकृत प्रणाली के तहत की जाती है जो उन्हें सिविल सेवक बनाती है, जबकि निजी सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त महाविद्यालयों में उनके समकक्षों की भर्ती विश्वविद्यालय द्वारा की जाती है। इनमें से बड़ी संख्या में संबद्ध महाविद्यालयों के पास अपेक्षित न्यूनतम बुनियादी ढांचा भी नहीं है। इन महाविद्यालयों के लिए पाठ्यक्रम विश्वविद्यालयों द्वारा निर्धारित किया जाता है और परिणामस्वरूप संबद्ध महाविद्यालयों को पाठ्यक्रम तैयार करने में थोड़ी स्वायत्तता मिलती है। महाविद्यालयों के प्राचार्य विश्वविद्यालय की कुछ समितियों में काम करते हैं लेकिन यह बात हमेशा यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त नहीं होती है कि महाविद्यालय विशेष के हितों को पूरा किया जा रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य और उच्च शिक्षा निदेशालय महाविद्यालयों के भीतर की गतिविधियों के अधिकांश क्षेत्रों पर पर्याप्त नियंत्रण रखते हैं। इस प्रकार महाविद्यालय सरकार द्वारा अति-नियमन और नियंत्रण के अधीन हैं।

संबद्ध महाविद्यालय परीक्षाएं आयोजित करते हैं और सभी संबंधित कागजी कार्यवाही करते हैं लेकिन इन परीक्षाओं की डिग्री विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की जाती है। स्वायत्त महाविद्यालयों की सबसे बड़ी संख्या तमिलनाडु राज्य में मौजूद है, इसके बाद आंध्र प्रदेश और कर्नाटक में है। संबद्ध महाविद्यालयी प्रणाली में उल्लेखनीय कमियों के बावजूद, स्वायत्त महाविद्यालयों की स्थापना की योजना में उम्मीद के मुताबिक प्रगति नहीं हुई है। प्रगति की इस कमी के लिए निम्नलिखित कारण जिम्मेदार हो सकते हैं; (i) राज्य सरकारें, सरकार द्वारा संचालित महाविद्यालयों पर अपना नियंत्रण छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं। (ii) निजी महाविद्यालयों के प्रबंधन को चिंता है कि वे अपनी शक्ति खो देंगे। (iii) स्वायत्त संस्थानों में शिक्षक समान रूप से कार्य भार संभालने के इच्छुक नहीं हैं, जिससे कई मामलों में, कुछ शिक्षकों पर कार्य का बोझ बढ़ जाता है। (iv) इस बात पर भी चिंता है कि क्या महाविद्यालय की डिग्री को विश्वविद्यालय की डिग्री के समान दर्जा दिया जाएगा।

भारत में उच्च शिक्षा नामांकन वर्तमान में अधिकांशतः राज्य विश्वविद्यालयों में हो रहा है। अतः प्रमुख सहवर्ती समस्याओं में से एक पूर्ववर्ती संरचना की उपस्थिति है, जिसमें विश्वविद्यालयों के अधीन कई संबद्ध महाविद्यालय होते हैं, जिससे प्रशासन की समस्याएं पैदा होती हैं। महाविद्यालयों को स्वायत्त बनाने का प्रस्ताव, शासन सम्बन्धी चुनौतियों से निपटने की

दिशा में, एक समाधान के रूप में प्रस्तुत किया गया है लेकिन यह अब तक कागजों तक सीमित होकर रह गया है। इसके अलावा, किसी विशेष महाविद्यालय को स्वायत्तता प्राप्त होने के बाद भी, विश्वविद्यालय उसके कामकाज पर नियंत्रण बनाए रखता है। यह अनुशंसा की जाती है कि किसी भी प्रकार की स्वायत्तता, चाहे वह प्रशासनिक, शैक्षणिक या वित्तीय हो, का उपयोग उच्च शिक्षा के क्षेत्र में नए विचारों को बढ़ावा देने के लिए उत्पादक रूप से किया जाना चाहिए, जो जिम्मेदारी की भावना, पूर्ण स्वामित्व, संबंधित महाविद्यालयों के संकाय सदस्यों के बीच परिश्रम और उत्पादक कार्य सुनिश्चित करने के लिए उत्साह को बढ़ाये। ऐसी प्रतिबद्धता के अभाव में स्वतंत्रता के दुरुपयोग की संभावना बनी रहती है और शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य हासिल नहीं हो पाता। इस प्रकार, स्वायत्तता और जवाबदेही साथ-साथ चलनी चाहिए। स्वायत्तता का कथित दुरुपयोग प्राधिकारी और संकाय के बीच अविश्वास को बढ़ावा दे सकता है, जिसके परिणामस्वरूप प्राधिकारी का नियंत्रण और अधिक हो जाएगा। वर्तमान प्रणाली की प्रमुख विशेषता महाविद्यालयों में अत्यधिक नौकरशाही, पदानुक्रम और संसाधनों की कमी है। ऐसी स्थिति में विश्वविद्यालय द्वारा ऊपर से नीचे तक पक्षपातपूर्ण निर्णय लिये और थोपे जाते हैं। स्वतंत्रता और अवसर की कमी संकाय सदस्यों को स्वयं की क्षमता का निर्माण करने और काम के प्रति प्रतिबद्धता को विकसित करने से रोकती है।

केंद्रीकृत प्राधिकारी द्वारा नियंत्रण की वर्तमान प्रणाली पाठ्यक्रम और परीक्षाओं के संचालन के संबंध में भी बाधाएं पैदा करती है, महाविद्यालय प्रशासन से अपेक्षा की जाती है कि वह विश्वविद्यालय के समर्थन के बिना, शिक्षण-अधिगम के पहलू को स्वयं लागू करेगा। विश्वविद्यालय के पास बड़े पैमाने पर स्नातक कार्यक्रम संचालित करने वाले महाविद्यालयों को सलाह देने और पर्यवेक्षण करने के लिए पर्याप्त संरचना नहीं होती है। जब तक विश्वविद्यालय प्रशासन उच्च गुणवत्ता वाले शैक्षिक ढांचे को सुचारू रूप से चलाने के लिए संबद्ध महाविद्यालयों के साथ बातचीत और चर्चा करने के लिए तैयार नहीं है, तब तक किसी भी तरह का विनियमन और जवाबदेही एक सफल कार्यक्रम प्रदान नहीं कर पायेगा। इसलिए, एक ऐसी संगठनात्मक संस्कृति बनाने के लिए समय और धन के निवेश की आवश्यकता है जो चर्चा, सहभागिता, संसाधन योजना और प्रबंधन को प्रोत्साहित करे।

इसके अलावा, स्नातक पाठ्यक्रम को शिक्षण संकाय, अनुसंधान संस्थानों और उद्योग के बीच अधिक उत्पादक सह-क्रिया के साथ बेहतर रोजगार क्षमता के लिए डिजाइन किया जाना चाहिए। नवीन अविष्कारों और कौशल को भी पर्याप्त मान्यता दी जानी चाहिए। बेहतर डिजाइन किए गए परीक्षण, पाठ्येतर गतिविधियाँ करने वाले छात्रों के लिए अधिक कोटा के साथ अतिरिक्त गतिविधियों एवं कौशलपूर्ण छात्रों की भागीदारी पर अधिक ध्यान वाली सम्पूर्ण प्रवेश आवश्यकताओं पर विचार करने एवं ध्यान देने की आवश्यकता है।

विश्वविद्यालय-महाविद्यालय के आपसी संबंधों की पारिस्थितिकी में महाविद्यालयों को प्रदान की जाने वाली स्वायत्तता और प्रकृति को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना अनिवार्य है। यह बात शिक्षक भर्ती प्रणाली पर भी लागू होनी चाहिए। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, सरकारी महाविद्यालयों में, शिक्षकों को अक्सर केंद्रीकृत प्रणाली से भर्ती किया जाता है, जिससे वे सिविल सेवक बन जाते हैं, उन्हें एक संबद्ध महाविद्यालय से दूसरे में स्थानांतरित किया जा सकता है, यह विश्वविद्यालय द्वारा कार्यान्वित प्रक्रिया से अलग है। इसका महाविद्यालयों में शिक्षण समुदाय के प्रबंधन और प्रबंधन में स्वायत्तता के स्तर पर प्रभाव पड़ता है।

एक अन्य विचारणीय महत्वपूर्ण पक्ष नेतृत्व का है, जहाँ विश्वविद्यालय और महाविद्यालय दोनों स्तरों पर प्राचार्यों और विभागाध्यक्षों की नियुक्तियाँ की जाती हैं।

महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के बीच मुख्य अंतर उनकी संस्थागत और अकादमिक प्रबंधन की संरचनाओं में है। विश्वविद्यालयों को अपने संस्थागत और शैक्षणिक मामलों के साथ प्रबंधन में काफी स्वतंत्रता प्राप्त है, वहीं सार्वजनिक महाविद्यालय कठोर प्रशासनिक और वित्तीय नियमों से बंधे विशिष्ट सरकारी संगठनों के रूप में कार्य करते हैं। यहां तक कि निजी महाविद्यालय, सरकारी महाविद्यालयों की तुलना में कुछ हद तक अधिक प्रशासनिक स्वायत्तता का आनंद लेते हुए भी सरकार द्वारा निर्धारित वित्तीय प्रबंधन के नियमों का पालन करने के लिए बाध्य हैं।

यह भी देखा गया है कि महाविद्यालयों में शोध की बजाय शिक्षण पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है। यहां तक की महाविद्यालयों में उपलब्ध सुविधाएं भी शोध के लिए अनुकूल नहीं हैं। शिक्षण पद्धतियों के मूल्यांकन में छात्रों के पृष्ठपोषण को ध्यान में नहीं रखा जाता है। इसके अलावा, अधिकांश महाविद्यालयों में शिक्षकों को उनकी सराहनीय शिक्षण पद्धतियों के लिए कोई पुरस्कार नहीं दिया जाता है। कार्यालयों और संकाय/कर्मचारियों की जवाबदेही का मूल्यांकन करने के लिए कोई संस्थागत तंत्र नहीं है। महाविद्यालयों में शिक्षकों की भर्ती और प्रोन्नति दोनों में पारदर्शिता का नितांत अभाव है।

प्राचार्य और विभागों के प्रमुख, शासी परिषद के अनिवार्य घटक के रूप में शासन में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालाँकि, शासन में

अन्य संकाय सदस्यों की निर्णय लेने में भागीदारी वस्तुतः नहीं के बराबर है और विभागाध्यक्ष, परिषद की बैठक में लिए गए निर्णयों के बारे में शिक्षकों को बताते हैं, जिनकी इस निर्णय में कोई भूमिका नहीं होती है।

इस प्रकार, अधिकांश महाविद्यालयों में नीचे से ऊपर की ओर दृष्टिकोण की पूर्ण अनुपस्थिति के साथ, संचार पूरी तरह से ऊपर से नीचे की ओर होता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में, 'स्वायत्त डिग्री-अनुदान महाविद्यालय (एसी)' शब्द एक बड़े बहु-विषयक संस्थानों के संदर्भ में लिया गया है, जो स्नातक की डिग्री प्रदान करता है और मुख्य रूप से स्नातक शिक्षण पर ध्यान केंद्रित करता है, लेकिन यह विमर्श स्नातक शिक्षण तक ही सीमित नहीं है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक मानक श्रेणीबद्ध पारदर्शी प्रणाली के माध्यम से महाविद्यालयों को श्रेणीबद्ध स्वायत्तता प्रदान करने के लिए चरणबद्ध तंत्र की स्थापना का प्रस्ताव करती है। इसमें यह भी सुझाव दिया गया है कि उच्च शिक्षण संस्थानों को अपनी योजनाओं, कार्यो और प्रभावशीलता के आधार पर धीरे-धीरे एक श्रेणी के संस्थान से दूसरे में जाने की स्वायत्तता और स्वतंत्रता होनी चाहिए।

हस्तक्षेप के क्षेत्र

नीति-निर्माताओं को महाविद्यालय स्तर पर शासन में बदलाव लाने में सक्षम बनाने के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों में हस्तक्षेप का प्रस्ताव है:

- कर्मियों और संसाधन आवंटन के मुद्दों पर केंद्रीय प्रशासन से विभिन्न महाविद्यालयों को अधिकार स्थानांतरित किया जाना चाहिए।
- साझा प्रशासन का माहौल बनाने के लिए, वरिष्ठ प्रशासकों को अकादमिक और कार्मिक मामलों संबंधी सीनेट के कामकाज में सभी स्तरों पर महाविद्यालयों के शिक्षाविदों को शामिल करना चाहिए। इस तरह का साझा शासन यह सुनिश्चित करेगा कि पाठ्यक्रम विकास, कार्यक्रम समीक्षा और शैक्षणिक मानकों से संबंधित निर्णय संकाय और शैक्षणिक प्रशासकों द्वारा सामूहिक रूप से लिए जाएं।
- संस्थागत प्रबंधन में पारदर्शी और लोकतांत्रिक कामकाज सुनिश्चित करने के लिए महाविद्यालयों में सभी प्रक्रियाओं को निर्धारित करने के साथ-साथ उनके कार्यान्वयन में निर्णय लेने की प्रक्रिया सहभागी और लोकतांत्रिक होनी चाहिए।
- पाठ्यक्रम की सामग्री, परीक्षा आयोजित करने और मूल्यांकन करने की प्रणालियों और शिक्षण विधियों में नवाचारों को अपनाने में न केवल अधिक वित्तीय संसाधनों के आवंटन की आवश्यकता है, बल्कि शिक्षकों के निरंतर प्रशिक्षण और कौशल उन्नयन की भी आवश्यकता है।
- शिक्षकों की भर्ती और स्थानांतरण के लिए मानदंड-आधारित, पारदर्शी और योग्यता-आधारित प्रणालियों की शुरूआत से न केवल कदाचार की संभावना कम होगी, बल्कि शिक्षकों के मनोबल और उच्च शिक्षा प्रणाली की विश्वसनीयता में भी सुधार होगा।
- ऐसा देखा गया है कि कुछ महाविद्यालयों में कई वर्षों से शिक्षकों की भर्ती नहीं हुई है, जिसके परिणामस्वरूप इन महाविद्यालयों में तदर्थ और अतिथि शिक्षकों पर अत्यधिक निर्भरता हो गई है। अधिक कुशल भर्ती प्रणाली स्थापित करके इस स्थिति से तत्काल निपटने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

उच्च शिक्षा प्रणाली में शासन का मुद्दा भारत में विकास के वर्तमान ढांचे के लिए विशेष प्रासंगिक है। हालाँकि यह देश के सामने आने वाले बड़े मुद्दों के केवल एक पहलू का प्रतिनिधित्व करता है, तदापि एक कुशल शिक्षा प्रणाली बनाने के महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी सुधारों में इसका महत्व बढ़ जाता है।

यद्यपि सामान्य समझ यह है कि हमें भारत में सभी महाविद्यालयों के लिए अधिक स्वायत्तता सुनिश्चित करने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए, वास्तव में, हम शिक्षा प्रणाली के सभी स्तरों पर ऊपर से नीचे तक हस्तक्षेप देखते हैं, विशेष रूप से विश्वविद्यालय में निर्णय लेने वाले निकायों में प्रमुख पदाधिकारियों की नियुक्तियों के संदर्भ में, इससे संस्था की जवाबदेही के साथ समझौता होता है। इस प्रकार महत्वपूर्ण निर्णय लेने में विश्वविद्यालय के वरिष्ठ प्रबंधन को मार्गदर्शन देने के लिए एक स्थायी और स्वतंत्र ढांचा तैयार करना आवश्यक है। इसके अलावा, विश्वविद्यालय पदानुक्रम के भीतर अधिक विकेंद्रीकरण की शुरुआत की जा सकती है, जो विश्वविद्यालय के संकायाध्यक्ष को सशक्त बनाने में मदद करेगा, साथ ही व्यक्तिगत विभागों को अधिक स्वायत्तता भी देगा। इसके अलावा, पाठ्यक्रमों को विनियमित करने, परीक्षा आयोजित करने और डिग्री प्रदान करने की जिम्मेदारी संबद्ध महाविद्यालयों को दी जानी चाहिए और महाविद्यालय स्तर पर स्नातकोत्तर कार्यक्रमों और अनुसंधान को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उच्च शिक्षा संस्थानों में शिक्षकों की गंभीर कमी को दूर करने के लिए स्थायी शिक्षकों की भर्ती के लिए भी विस्तृत प्रयास किए जाने चाहिए।

यह नीति सार, उच्च शिक्षा नीति अनुसंधान केंद्र (सीपीआरएचई), राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा), नई दिल्ली, में कार्यरत गरिमा मलिक द्वारा तैयार किया गया है।

नीति सार 6 और 7 मुख्य रूप से बड़े पैमाने पर सीपीआरएचई अनुसंधान अध्ययन पर आधारित हैं, जिसमें छात्रों और संकाय सदस्यों के प्रश्नावली-आधारित सर्वेक्षण, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों, सरकारी उच्च शिक्षा विभागों और राज्य उच्च शिक्षा परिषदों के प्रशासनिक और अकादमिक प्रमुखों के साथ साक्षात्कार शामिल हैं। अध्ययन में चार राज्यों, अर्थात् उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान और महाराष्ट्र में चयनित उच्च शिक्षण संस्थानों में छात्रों और संकाय सदस्यों के साथ समूह चर्चा भी सम्मिलित है।

cprhe नीति सार

नीति सार 1
भारत में उच्च शिक्षा की सुलभता में समानता
(निधि एस. सभरवाल और सी.एम. मलीश, 2017)

नीति सार 2
भारत में उच्च शिक्षा में शैक्षणिक समेकन
(निधि एस. सभरवाल और सी.एम. मलीश, 2017)

नीति सार 3
भारत में उच्च शिक्षा के लिए सामाजिक समावेश से संपन्न परिसरों का विकास करना
(निधि एस. सभरवाल और सी.एम. मलीश, 2017)

नीति सार 4
भारत में उच्च शिक्षण संस्थानों में संसाधन आवंटन की बदलती दिशाएं
(जिनुशा पाणिग्रही, 2023)

नीति सार 5
भारत में उच्च शिक्षण संस्थानों द्वारा संसाधन संग्रह की रणनीतियाँ
(जिनुशा पाणिग्रही, 2023)

नीति सार 6
भारत में सरकार और विश्वविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के अंतर्संबंध
(गरिमा मलिक, 2023)

नीति सार 7
भारत में विश्वविद्यालय-महाविद्यालय शासन संबंध
(गरिमा मलिक, 2023)

cprhe
Centre for Policy Research in Higher Education
www.cprhe.niepa.ac.in